सोलह भावना एवं सम्यक् ध्यान शतक
ज्ञानवर्धन प्रतियोगिता
भाद्रपद माह 2022
तीर्थोदय काव्य एवं सम्यक् ध्यान शतक का स्वाध्याय
सोलहकारण पर्व में करें विशेष धर्मध्यान एवं
जीतें आकर्षक पुरूस्कार ...बनें प्रतियोगिता के विजेता
यह तीर्थोदय काव्य एवं सम्यक् ध्यान शतक सिद्धांत भूषण विशेष
पदवी हेतु स्वीकृत किया गया है ..इस कोर्स को अवश्य करें
प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु 9174843674

सम्यक् ध्यान शतक

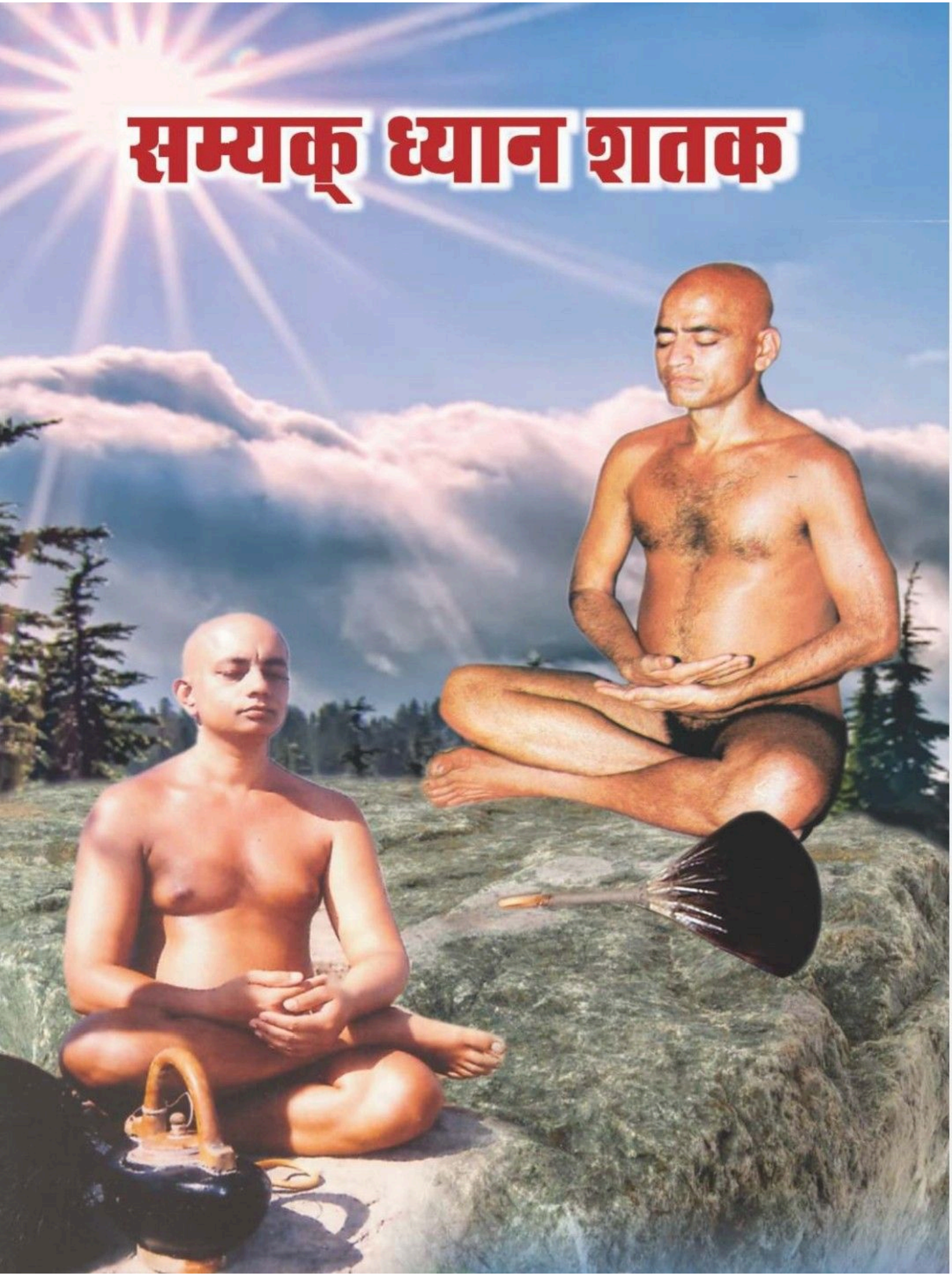

सम्यक्-ध्यान-शतक-शब्दकोष

अणुव्रत - स्थूल रूप से हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह रूप पंच पापों का त्याग करना अणुव्रत है।

अर्थ - ध्येय, प्रयोजन, द्रव्य और पर्याय।

अथ - प्रारम्भ।

अधर्म - मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र को अधर्म कहते हैं।

अध्येता- अध्ययन करने वाला।

अध्यात्म- आत्मा से सम्बन्धित।

अनिष्ट-संयोग-अपने लिए बाधा देने वाले पदार्थ या अच्छे नहीं लगने वाले पदार्थों के मिल जाने पर वे कब दूर हो जायें ऐसा चिंतन अनिष्ट संयोग आर्त्तध्यान है।

अन्तर्मुहूर्त्त - 48 मिनिट की दो घटिका से कुछ कम और आवली से अधिक काल को अन्तर्मुहूर्त्त कहते हैं।

अनुकम्पा- दया, करुणा, जीव-रक्षा।

अनुभूति - अनुभव।

अपाय-विचय - संसारी आत्मा मिथ्यात्व या मिथ्यामार्ग अथवा पंच मिथ्यात्व और दुर्गति आदि कष्टों से कैसे बचें ऐसा चिंतन करना अपाय विचय धर्मध्यान है।

अपूर्वकरण- जैनागम संस्कार पृ.184 पर देखें।

अप्रमत्तसंयत- प्रमाद रहित सावधान मुनि।

अभिराम - सम्पूर्ण।

अभिव्यंजना- प्रकट करना।

अयोग - जो मन, वचन, काय की क्रिया से रहित है उसे अयोग कहते हैं।

अरति- अप्रीति रूप परिणाम।

अर्हत् – पूजन करने योग्य।

अवतार – पुनर्जन्म।

अवदान– पवित्र व मान्यता प्राप्त वृत्ति, सम्पन्न कार्य।

अव्रत– अहिंसा, सत्य अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का अभाव।

अशन – भोजन ।

असंयत सम्यग्दृष्टि– व्रतरहित होकर भी वीतराग– मय जिनधर्म पर श्रद्धा धारक।

अस्तिकाय – जो बहुप्रदेशी हैं वे अस्तिकाय हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश ये पाँच अस्तिकाय हैं।

अष्टम-गुणस्थान – जिस गुणस्थान में संज्वलन कषाय का मन्दोदय होने से पूर्व में अप्राप्त ऐसे परम आह्लाद सुख के अनुभव रूप अपूर्व-अपूर्व (नए-नए) परिणाम होते हैं। इस गुणस्थान में होने वाले उपशमक और क्षपक अपूर्वकरण नामक अष्टम गुणस्थानवर्ती कहलाते हैं।

अहमिन्द्र– जहाँ सामान्य देव नहीं होते, बल्कि सभी स्वयं इन्द्र होते हैं।

अक्ष – इन्द्रियाँ।

अक्ष-व्यापार – इन्द्रियों के कार्य।

आकुलता – चिंता, अशांति, अथवा सांसारिक आशायें।

आत्म-शांति –आत्मलीनता या अपने आत्मिक आनन्द को आत्म-शान्ति कहते हैं।

आत्म-अभिषेक – परिमार्जन, आत्म शुद्धि / पवित्रता या शुभ ध्यान।

आत्म – निज, चेतना।

आत्म-गुण – ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि।

आत्मसात्– अंतरंग में ग्रहण।

आदर्श – श्रेष्ठ।

आदेश – आज्ञा।

आधार – जिसके सहारे वस्तु रहती है वह आधार कहलाता है।

आमिस – मांस। जिसमें अपक्व या अग्निपक्वादि किसी भी अवस्था में अनंत त्रस जीव उत्पन्न होते रहते हैं। और जो आहार न होते हुए अभक्षणीय वस्तु है। इसी मांस के अन्तर्गत अण्डे, मछली भी शामिल किये जाते हैं।

आप्त – वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी अर्हन्त-भगवान को आप्त कहते हैं।

आर्य- धर्म, कर्म से गुणवान पुरुष।

आस्तिक्य – आस्था व श्रद्धावान रूप गुण।

सम्बन्धी सामायिक, स्तुति, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग तथा श्रावकों सम्बन्धी देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान।

आज्ञा विचय – जिनेन्द्र भगवान द्वारा प्रतिपादित आगम वचन ही सत्य और कल्याणकारी हैं ऐसा चिंतवन कर सात तत्त्व, छह द्रव्य आदि के स्वरूप का विचार करना आज्ञा विचय नाम का धर्मध्यान है।

इन्द्र- आज्ञा व ऐश्वर्य वाला देव।

इष्ट – अपनी प्रिय वस्तु जिसके बिना रुचिकर नहीं लगे ऐसी वस्तु को इष्ट वस्तु (पदार्थ) कहते हैं।

ईश – इष्ट देवता, वीतराग परमेष्ठी।

उपयोग – स्व और पर को जानने और देखने वाले जीव के परिणाम को उपयोग कहते हैं।

उपवास – खाद्य, स्वाद्य, लेय, पेय ऐसे चारों प्रकार के आहार का त्याग करना उपवास है।

उपदेश – प्रवचन ।

उपसर्ग – उपद्रव जो कि देवकृत, मनुष्य कृत, तिर्यञ्चकृत और प्रकृतिकृत इस तरह चार प्रकार के होते हैं।

उपादान- अन्तरंग कारण रूप शक्ति।

ऊर्जा – एक आन्तरिक शक्ति।

ऊहापोह – तर्कणा, बार-बार चिन्तवन और मन्थन करना।

एकाशन – एक बार आहार करना।

एकान्त – निर्जन या शांत स्थान।

एकाग्र – ध्यान का एक जगह टिकना।

एकत्व-वितर्क-अविचार – मोहनीय कर्म को पूर्णतः नष्ट करने के लिए साधु मन-वचन-काय रूप किसी एक योग में स्थित रहकर, अर्थ, व्यंजन व योग के परिवर्तन से रहित होकर श्रुत के माध्यम से जो किसी एक द्रव्य, गुण या पर्याय का चिंतवन करते हैं उसे एकत्व वितर्क अविचार नामक द्वितीय शुक्ल-ध्यान कहते हैं।

ओम् – जिसमें पंच परमेष्ठी समाहित हैं वह ओम् (**ॐ**) है ।

कंद – आलु, प्याज आदि जीवों के रहने के स्थान रूप जमीन के अन्दर उत्पन्न होने वाली कुछ तामसिक वनस्पतियों को जमीकंद कहते हैं।

कर्णिका – कमल के बीच का उन्नत भाग।

कर्म – जीव के रागद्वेषादिक परिणामों के निमित्त से कार्मणवर्गणा रूप जो पुद्गलस्कन्ध जीव के साथ सम्बन्ध को प्राप्त होते हैं, उन्हें कर्म कहते हैं।

कल्याण- उद्धार।

कषाय- कर्मबंध कारक कलुषित परिणाम।

कायोत्सर्ग – शरीर से ममत्व छोड़कर ध्यान में लीन होना कायोत्सर्ग कहलाता है।

काल – समय।

कुदर्श – मिथ्यादर्शन।

कृतकृत्य- करने योग्य कर्त्तव्य को कर चुकने वाला आत्मा।

केवलज्ञानी – तीनों लोकों और अलोक को भी युगपत् जानने वाले।

केवलज्ञान/ कैवल्य- जो सकल चराचर जगत् को दर्पण में झलकते प्रतिबिंब की

तरह एक साथ स्पष्ट जानता है वह केवलज्ञान है।

केवली – जो इन्द्रियों की सहायता से रहित केवलज्ञान और केवलदर्शन से युक्त हैं उन्हें केवली कहते हैं।

क्षीणकषाय– कषाय रहित बारहवाँ गुणस्थान।

क्षेत्र – स्थान ।

खड्गासन– खड़े होकर व्यवस्थित ध्यान करना।

खेद – कष्ट ।

गम – दुःख।

गणधर – मुनि समूह के स्वामी।

गति-आगति – चारों गतियों में जन्म और मरण होना।

गरिष्ठ पदार्थ – अपने अन्दर उत्तेजना लाने वाले पदार्थ जैसे – मेवा, बादाम, काजू आदि और खोवा, मिठाई, हलुवा आदि।

गवासन– गाय की तरह पैर पीछे मोड़कर बैठना।

गिरनार – यहाँ से बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ भगवान मोक्ष गये हैं। यह गुजरात में स्थित है।

गुणथान – मोह और योग के माध्यम से जीव के परिणामों में होने वाले उतार-चढ़ाव को गुणस्थान कहते हैं।

गुण अनन्त – जिसकी आत्मा में गुणों की संख्या अनन्त हो।

गुप्ति – मन, वचन, काय (शरीर) की क्रिया को रोकना अथवा मन को धर्मध्यान में लीन करना गुप्ति है।

गुरु – जो निर्मोही और निर्ग्रन्थ महान पुरुष होते हैं उन्हें गुरु कहते हैं।

गोपाचल – यह ग्वालियर किला के पूर्व तरफ है यहाँ पर 42 फुट ऊँची पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा पद्मासन में विराजित है और भी कई मूर्तियाँ गुफा[illegible] गई हैं।

ग्यारह-अंग- जैनागम संस्कार (अ.1, पृ.7) पर देखिये

घातिकर्म - ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय ये चार कर्म घातिकर्म कहलाते हैं।

चक्रवर्ती- षट्-खण्ड पृथ्वी का स्वामी।

चम्पापुर - इस क्षेत्र से बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य मोक्ष गये हैं। यह बिहार देश में है।

चरणानुयोग- श्रावक व मुनि के आचरण को बतलाने वाला शास्त्र।

चारित्र - व्रतों का पालन करना। वह श्रावकों के अणुव्रत या देशसंयम रूप होता है और मुनियों के महाव्रत या सकलसंयम रूप होता है।

चिद्रूप - आत्म रूप।

चिदानन्द - आत्म-आनन्द।

चिन्तामणी- मनोवाच्छित वस्तुप्रदायक रत्न।

चौदहवें-गुणस्थान - जो अठारह हजार-शीलों के स्वामी हैं, जो आस्रव से रहित हैं, जो मन, वचन, काय से रहित हैं, और केवलज्ञान से विभूषित हैं, वे चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी जिन कहलाते हैं।

चौदह-पूर्व- जैनागम संस्कार (अ.1, पृ.7) पर देखिये।

चौर्यानंद - चोरी में आनन्द मानना।

जग - विश्व या लोक।

जन्म - शरीर का उत्पन्न होना।

जगत् वंद्य - तीन लोक में रहने वाले सभी जीवों से पूज्य।

जगत् से राग - स्व-आत्म से अन्य या भिन्न वस्तुओं से ममत्व।

जम्बूदीप- मध्यलोक का प्रथम द्वीप।

जाप - मंत्रों का उच्चारण या अन्तर्जल्प-मंत्र चिन्तवन।

जिन - ''इन्द्रियाणि जयतीति जिनः'' जिन्होंने इन्द्रियों को जीत लिया है उन्हें जिन कहते हैं।

जिनेन्द्र- इन्द्र अर्थात् इन्द्रियों को जीतने वाले होने से जिनेन्द्र या जितेन्द्र कहलाते हैं।

जीव - जो जानता और देखता है उसे जीव कहते हैं। या जो प्राणों से जीता है उसे जीव कहते हैं।

ज्ञान - जानना मात्र ही ज्ञान है या जिसके द्वारा जाना जाए वह ज्ञान है।

तत्त्व - जिस वस्तु का जो भाव है वही तत्त्व है। जो पदार्थ जिस रूप में अवस्थित है उसका उस रूप होना यही तत्त्व शब्द का अर्थ है।

तत्त्व-धारणा - जिस वस्तु का जो भाव है वही तत्त्व है। ऐसा अनन्त-ज्ञान, दर्शन आदि परम-तत्त्वों से सम्पन्न आत्मा; देह और संसार से विलग भाषित हो रहा है ऐसा चिंतवन करना।

तामसिक - मांस, नशीली वस्तु, जमीकंद आदि और ज्यादा मिर्च वाले पदार्थों को तामसिक भोजन कहते हैं।

तेरहवें-गुणस्थान - जिनका केवलज्ञान रूपी सूर्य की किरणों से अज्ञान-अंधकार नष्ट हो गया है, जो केवलज्ञानी होने से परमात्म-संज्ञा को प्राप्त हुए हैं, ऐसे केवली, सयोगी-जिन आदि विशेषणों से युक्त आत्मा सयोग-केवली नामक तेरहवें गुणस्थानवर्ती कहलाती है।

त्रस - दो इन्द्रिय आदि जीवों को त्रस कहते हैं। जैसे-लट्, चींटी, भ्रमर और मनुष्य आदि।

त्रिशलागिरि - ग्वालियर में जो गोपगिरि पर्वत है उसकी पश्चिम दिशि में महावीर भगवान की प्रतिमा सह उनके पंच कल्याणक जहाँ पत्थरों में उकेर कर दर्शाये हैं।

दया - जीवों की रक्षा करना दया है।

दर्शन - सम्यग्दर्शन।

द्वादशांग - दिव्य-ध्वनि के बारह-अंग।

दिगम्बर- दिशाएं ही जिनके वस्त्र हैं ऐसे निर्वस्त्र मुनि।

दूरबीन - लेन्स (दूर की वस्तु को स्पष्ट देखने के लिये काम में आने वाला यंत्र)।

देव - जो सदा परम सुख में लीन रहते हैं, जो जन्म-मरण रूप संसार से मुक्त हो गए हैं, और जो धर्म के विधाता हैं वे देव कहलाते हैं या देवगति के देवों से भी पूज्य ऐसे अरिहंत, सिद्ध रूप देवाधिदेव।

देवपूजा- वीतराग सर्वज्ञ देव की पूजा।

देशना - भगवान की वाणी।

द्रव्य - वस्तु या सामग्री।

धर्म - 'धरतीति धर्मः' जो उत्तम सुख में रख देता है वह धर्म है।

धारणा - पृथ्वी आदिक पांच के आलंबन से या पंच-नमस्कार मंत्र व जिनप्रतिमा के आलम्बन से मन को एकाग्र करना धारणा नाम का ध्यान है।

धीमान - बुद्धिमान, या विद्वान।

ध्यान - चित्त या उपयोग की एकाग्रता का नाम ध्यान है।

ध्याता - ध्यान करने वाला।

ध्येय - ध्यान करने योग्य।

नमन - नमस्कार।

नव-देव - अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व-साधु, जिन-धर्म, जिन-श्रुत, जिन-चैत्य, और जिन-चैत्यालय ये नवदेवता कहलाते हैं।

नवमल- नाक का मैल, कान का मैल, आँखमल, दंतमल, पुरीस, मूत्र, रोम और नख।

नशा - मादक पदार्थ।

नाथ - स्वामी।

नाशादृष्टि - जिसकी आशा पर दृष्टि नहीं है और नाक के अग्र भाग की सीध में अर्थात् जो न बंद न अधिक खुली दृष्टि है वह राग-द्वेष दूर नाशादृष्टि कहलाती है।

निज - आत्मा।

निजसुख - अपना आत्म-सुख।

निजानुभव - आत्मानुभूति।

निज एक सो तेरा - जो अपना एक आत्मा है वही तेरा है॥

निर्मल - क्षोभ से रहित निश्चिन्तता।

निश्चल - चलन रहित/स्थिरता।

निदान - आगे इन्द्र आदि की भोग सम्पदा मिले ऐसा परिणाम निदान कहलाता है।

निद्रा - नींद आना।

निमित्त - जो कार्य के होने में सहयोगी हो या जिसके बिना कार्य न हो उसे निमित्त कहते हैं।

निर्ग्रन्थ - धन-धान्यादि परिग्रह को ग्रन्थ कहते हैं अतः जो समस्त परिग्रहों से रहित हैं वे साधु निर्ग्रन्थ कहलाते हैं।

निरंजन - कर्म रूपी अंजन से रहित।

निवृत्ति - छूटना।

निष्कलंक - कर्म-कलंक से रहित।

निश्चय - अभेद एकत्व या परसम्पर्क से रहित शुद्धात्मा में लीन मुनि।

निशि - रात्रि।

निषद्या - बैठकर गवासन से नमस्कार करना।

नेक - अच्छा।

नेमिगिरि - ग्वालियर में गोपाचल की ईशान दिशि में नेमिनाथ भगवान का तीर्थ रचित है।

पंचपरावर्तन- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव रूप पंच परावर्तन।

पंचाचार - ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार ये पंचाचार

कहलाते हैं।

पंचास्तिकाय- जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश ऐसे पाँच द्रव्य।

पदस्थ - एक अक्षर से प्रारम्भ करके अनेक प्रकार के पंचपरमेष्ठी वाचक पवित्रमंत्र आदिक पदों का आलम्बन लेकर जो ध्यान किया जाता है वह पदस्थ ध्यान है।

पद्मासन- बैठकर दोनों पंजे; पैर और जंघा पर पद्म या पांखुड़ी की तरह रखना।

परमेष्ठी - जो परम-पद में स्थित हैं वे परमेष्ठी कहलाते हैं।

परमतत्त्व - शुद्ध जीव तत्त्व।

परमशान्ति - उत्कृष्ट आनन्द।

परमार्थ - मोक्ष ही जिसका प्रयोजन है वह परमार्थ है।

परमातम - उत्कृष्ट आत्मा रूप भगवान को परमातम कहते हैं।

परिग्रहानन्द - परिग्रह में आनन्द मानना।

परिषह- बाईस तरह की बाधाएँ।

पाक - फल मिलना या फलश्रुति।

पावापुर - यहाँ से चौबीसवें तीर्थंकर महावीर भगवान मोक्ष गये हैं। यह बिहार देश में है।

पिंडस्थ - निजात्मा का धारणाओं के माध्यम से चिंतवन करना पिंडस्थ ध्यान है।

पीड़ा-चिंतन - शरीर की पीड़ा, या रोगादिक की पीड़ा होने पर वह कब मिट जाये ऐसा चिंतन पीड़ा-चिंतन आर्त्तध्यान है।

पुराकृति- पूर्व-कृत।

पृथक्त्व-वितर्क-वीचार - इस ध्यान में महामुनि समस्त रागादि विकल्पों से रहित होकर अनेक द्रव्यों का अलग-अलग आलम्बन लेकर अर्थ, व्यंजन और योगों में परिवर्तन करते हुए श्रुतज्ञान के माध्यम से ध्यान करते हैं। यह पहला शुक्ल ध्यान है।

पृथ्वी धारणा - इस भूमि पर मैं क्षीरसागर के बीच स्थित पर्वत की चोटी पर साधु बनकर बैठा हूँ ऐसा चिन्तवन करना।

प्रकृति - स्वाभाविक वातावरण रूप पर्यावरण।

प्रतिक्रमण- पापों का प्रक्षालन।

प्रतिपाती - गिरने वाला।

प्रत्याख्यान- त्याग।

प्रभु - स्वामी, भगवान।

प्रमत्तसंयत- मुनि की प्रमाद अवस्था।

प्रमाद - आलस्य। या आध्यात्मिक दृष्टिकोण से स्पर्शन रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र रूप पंच-इन्द्रियों, क्रोध, मान, माया और लोभ-रूप चारकषायों, स्त्रीकथा, भोजनकथा, राष्ट्रकथा और चोर कथा रूप चार विकथाओं तथा निद्रा और स्नेह रूप इन पंद्रह प्रमादों में आत्म-परिणाम प्रयुक्त होना प्रमाद कहलाता है।

प्रशम-शांत परिणाम।

प्रमोद - हर्षित होना।

प्रासुक - जल व वनस्पति आदि को विशेष प्रक्रिया के द्वारा (गरम आदि करके) जीवों से रहित बनाना प्रासुक कहलाता है।

फलश्रुति- सत्कर्म विशेष का फल बतलाने वाला वाक्य।

बंध - कर्म का आत्मा के साथ एकक्षेत्रावगाह सम्बन्ध होना बंध कहलाता है।

बाधक - जो अपने लिये बाधा उत्पन्न करने वाली वस्तु हो उसको बाधक कहते हैं।

बारहवें-गुणस्थान - मोहनीय कर्म के निःशेष क्षीण हो जाने से जिसका चित्त स्फटिक मणि के निर्मल भाजन में रक्खे हुए सलिल के समान स्वच्छ हो गया है ऐसे निर्ग्रन्थ साधु को वीतरागियों ने क्षीणकषाय नामक बारहवें गुणस्थान वाला संयत कहा है।

ब्रह्मा - आत्मा को जानने वाला।

बुद्ध - ज्ञानी।

बोधगम्य- जानने योग्य।

भव - आयु कर्म के उदय से जीव की जो मनुष्य, देव आदि पर्याय होती है उसे भव कहते हैं।

भव-वांछा - लौकिक या सांसारिक आशायें।

भाव - परिणाम।

भावन - चिन्तवन करने योग्य शुभ भावनायें।

भावनाएँ - शुभचिंतवन (शब्द कोष के अंत में देखें सत्तर प्रकार की भावनाएँ वर्णित हैं।)

भोग - जो वस्तु एक ही बार भोगने में आती है उसे भोग कहते हैं। जैसे- भोजन गन्ध, मालादि।

भोगोपभोग परिमाण- भोग और पुनः भोगने योग्य वस्त्रालंकार आदि का प्रमाण-सीमा करना।

भोगी - भोगों का सेवन करने वाले गृहस्थ।

भोज - भोजन। (खाद्य, स्वाद्य, लेह्य और पेय)

मन - पंच इन्द्रियों द्वारा ग्रहीत किये गए पदार्थों में जो गुण दोषों का विचार व स्मरण आदि करता है वह मन है। द्रव्य मन; अष्टदल कमलाकार शरीर के हृदय स्थल प होने वाली एक पुद्गल रूप रचना है जिसे हृदय, अन्तःकरण आदि भी कहते हैं।

78 / 90

मझार - बीच ।

महद्- सर्व-श्रेष्ठ।

मावा- खोवा

मर्यादित - मर्यादा से सहित पदार्थ जैसे - आटा की मर्यादा गर्मी में 5 दिन, वर्षाकाल में 3 दिन, शीतकाल में 7 दिन की है वैसे अन्य चीजों की मर्यादाएँ इसी पुस्तक के अंत में दिये गये चार्ट में देखें।

मिथ्यात्व- कुतत्त्व श्रद्धा।

मारुत - हवा।

मिथ्यादृष्टि- सरागी या कुतत्त्व पर श्रद्धा रखने वाली आत्मा।

मीमांसा- गम्भीर मनन व विचार।

मुनि - 'मौनं धारतीति मुनिः' जो पाप से मौन रहते हैं उन्हें मुनि कहते हैं।

मुनिवर - जो मुनियों में श्रेष्ठ होते हैं वे मुनिवर हैं।

मुक्ति - अष्ट-कर्मों से रहित होना मुक्ति है।

मृषानंद - झूठ में आनन्द मानना।

मृत्यु - शरीर से आत्मा निकल जाना।

मेवे- सूखे फल- पिस्ता, बादाम, काजू, किसमिश, मुनक्का आदि।

मैत्री - अपनापन-आत्मीयता या मित्रता।

मोक्ष - समस्त कर्मों से रहित आत्मा की परम विशुद्ध-अवस्था का नाम मोक्ष है।

मोक्ष-मग - मग अर्थात् मार्ग। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, और सम्यक्चारित्र इन तीनों की एकता ही मोक्ष-मग या मोक्ष-मार्ग है।

मौन- पाप-वचन या वचन क्रिया को रोकना।

यथाख्यात - समस्त मोहनीय कर्म के उपशान्त या क्षीण हो जाने पर जो स्वभाविक वीतराग-चारित्र उत्पन्न होता है उसे यथाख्यात चारित्र कहते हैं।

यति - जो हमेशा यत्न या पुरुषार्थ करते हैं उन साधु को यति कहते हैं।

योग - मन, वचन, और काय के द्वारा होने वाले आत्म-प्रदेशों के परिस्पन्दन को योग कहते हैं।

योगी - योगों को धारने वाले (मुनि महाराज साधु आदि)।

रंक - गरीब।

रत्नत्रय - सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, और सम्यक्चारित्र - इन तीन गुणों को रत्नत्रय कहते हैं।

रसना - जो हमें स्वाद चखाती है उसे रसना इन्द्रिय कहते हैं।

राजसिक - पूड़ी, पकवान आदि गरिष्ठ पदार्थों को राजसिक भोजन कहते हैं।

राजू- एक अलौकिक माप। (देखिये- आगम-अनुयोग)

रूपस्थ - आत्मा हमेशा चेतन रूप अर्थात् ज्ञान, दर्शन स्वभाव वाला है ऐसा चिंतवन करना रूपस्थ ध्यान है।

रूपातीत - आत्मा कर्म कलंक से रहित है, तीनों काल में शुद्ध है, निरंजन है ऐसा चिंतन करना रूपातीत ध्यान है।

रौद्र -ध्यान - रुद्र का अर्थ क्रूर है और क्रूर आशय रूप परिणाम होना रौद्र-ध्यान है।

लोक- जहाँ छह द्रव्य देखे जावें।

लख चौरासी योनि -जीव के जन्म लेने के स्थान को योनि कहते हैं वे 84 लाख हैं।

वज्रवृषभनाराच संहनन - जिस कर्म के उदय से शरीर में अभेद्य वज्र मय वेष्ठन होता है और हड्डियाँ परस्पर वज्रमय नाराच अर्थात् कील से जुड़ी होती हैं ऐसा हड्डियों का सुदृढ़ बंधन वज्र-वृषभ-नाराच संहनन कहलाता है।

वन्दना- वीतराग को नमन।

वज्रासन- दोनों पैर मोड़कर, उन पैरों पर सीधा बैठना।

वय जेष्ठ - चिरंजीव या लम्बी उम्र।

वर्धमान मन्दिर किला - गोपगिरि ग्वालियर में किला के परिसर में (वर्तमान सिंधिया स्कूल के मैदान के अन्दर यह मन्दिर है) यहाँ पर पहले भगवान महावीर की अवगाहना (ऊँचाई) के बराबर स्वर्ण की प्रतिमा थी; अभी भी उस मन्दिर के पाषाण के द्वार पर पहली मंजिल में पार्श्वनाथ और तीसरी मंजिल में महावीर भगवान की दिगम्बर जैन प्रतिमाएं बनी हैं।

वस्तु-स्वभाव - वस्तु के गुण-धर्म को वस्तु-स्वभाव कहते हैं जैसे जल का गुण-धर्म शीतलता, अग्नि का स्वभाव उष्णता आदि।

वायु-धारणा - जले हुए कर्मों की राख को तीव्र वायु उड़ा ले जा रही है ऐसा चिन्तवन करना।

80 / 90

विपाक-विचय - संसार में जीवों को जो पुण्य और पाप कर्म का फल प्राप्त होता रहता है उसका चिंतवन करना विपाक-विचय धर्म ध्यान है।

विरंग - विकल्पों से रहित निर्विकल्पता।

विद्या गुरु - संत शिरोमणी आचार्य विद्यासागर जी महाराज; जिनसे आचार्यश्री आर्जवसागरजी दीक्षित हैं।

विद्याधर- आकाश में विचरण करने वाले विजयार्ध श्रेणी में रहने वाले मनुष्य।

विषय-पवन - इन्द्रियों के द्वारा जानने योग्य पदार्थ को विषय कहते हैं। पवन मतलब हवा।

वीतराग - आत्म-साधना के द्वारा जिन्होंने राग-द्वेष को नष्ट कर दिया है उन्हें वीतराग कहते हैं।

वीतरागी - राग, द्वेष से रहित आत्मा वीतरागी कहलाती है।

वीर-निर्वाण - भगवान महावीर का मोक्ष दिन (दीपावली से नया वीर निर्वाण संवत् प्रारम्भ होता है।)।

वीरासन- पद्मासन को छोटा करते हुए पंजे; जंघाओं पर थमाना।

वृषभांचल - ग्वालियर किला पर उरवाही द्वार से चढ़ते समय बीच में 84 फुट ऊँची आदिनाथ भगवान की प्रतिमा खड्गासन में जहां विराजमान है उस परिसर को वृषभांचल कहते हैं।

व्यंजन : वचन, शब्दशक्ति जिससे अर्थ उपलक्षित हो ऐसी ध्यान योग्य वस्तु।

व्युपरतक्रिया निवृत्ति - केवली-भगवान के द्वारा जब श्वासोच्छवास रूप क्रिया का तथा समस्त मन-वचन-काय की क्रिया का निरोध कर दिया जाता है तब यह व्युपरतक्रिया-निवृत्ति नाम का चौथा शुक्ल-ध्यान कहलाता है।

श्वेतासन - धवल-पीठ।

शिव-मंजिल - मोक्ष रूपी महल।

शिवधाम - सिद्धों का स्थान (लोक के ऊपर स्थित सिद्धशिला)।

शुक्ल-ध्यान - रागादि विकल्प नष्ट हो जाने पर आत्मा में जो निर्विकल्प - ध्यान की प्राप्ति होती है उसे शुक्ल-ध्यान कहते हैं।

शुद्धोपयोग- वीतरागी, संयमी, तपस्वी और समताधारी मुनि की विशुद्ध अवस्था।

शुभ-ध्यानी - प्रशस्त या श्रेष्ठ रूप धर्म ध्यान फिर शुक्ल-ध्यान करने वाला आत्मा।

शुभ रूप - मंगल स्वरूप।

शुभचन्द्राचार्य- भर्तृहरि के बड़े भाई दिगम्बर निर्ग्रन्थाचार्य।

शोक - उपकार करने वाले से संबंध छूट जाने पर जो चित्त में विकलता होती है उसे शोक कहते हैं।

शोधित - जीव, बालादिक का शोधन करके या एकाग्रतापूर्वक देखकर के बनाया गया।

श्रुत - शास्त्र।

श्रेष्ठी- सेठ।

संग - परिग्रह ।

सच्चा-सौख्य - जिसके पीछे दुःख नहीं है वह सच्चा-सौख्य है।

सद्गुण-गण - उत्तम गुणों का समूह।

सप्ततत्त्व- जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।

सम्यक् - सम्यक् का अर्थ समीचीन या सच्चा है।

संयतासंयत- अणुव्रती अथवा देशसंयमी।

संयम - मन, वचन, काय की अशुभ-प्रवृत्ति का त्याग करना तथा इन्द्रियों को वश में रखना यह संयम है।

संयम-सुख - त्याग में आनन्द।

संयोग - मिलन/सम्पर्क।

संवेग - दुःख-मय संसार के पापों से सदा डरते रहना संवेग कहलाता है।

संसार - ''संसरतीति संसारः'' इस जीव का देव, मनुष्य, तिर्यञ्च और नरक इन चारों गतियों में जो भ्रमण होता है उसको संसार कहते हैं।

संसर्ग - लगाव या सम्बन्ध।

संस्थान-विचय - तीन लोक की रचना और उसके प्रमाण, भेद आदि व शुद्ध-द्रव्य का चिंतवन करना संस्थान-विचय धर्म ध्यान है।

संहनन - हड्डियों की शक्ति विशेष को संहनन कहते हैं।

सत्योग - अच्छा योग।

सप्त व्यसन- जुआ, चोरी, शिकार, मांस, शराब, परस्त्री-सेवन और वेश्यागमन।

सम - सम्यक् या सच्चा। अथवा-

सम - सुख, दुःख में शत्रु, मित्र आदि में समान-भाव होना सम कहलाता है।

समता - शत्रु-मित्र, सुख-दुःख, लाभ-अलाभ और जय-पराजय आदि में हर्ष-विषाद नहीं करना समता है। अथवा वीतराग सम्यक्त्व व चारित्र का होना।

समकित - सम्यग्दर्शन।

समदर्शन- सम्यग्दर्शन।

समाधि - वीतराग-भाव से आत्मा का ध्यान करना समाधि है। अथवा समस्त विकल्पों का नष्ट हो जाना परम समाधि है।

समिति- समीचीन प्रवृत्ति रूप मुनि की पंच समितियाँ। (देखिये जैनागम संस्कार अ.11, पृ.98)

सम्मेदगिरि - शाश्वत् सिद्धक्षेत्र; इसी महान क्षेत्र से वर्तमान चौबीसी में से 20 तीर्थंकर मोक्ष गये हैं। ये झारखंड में स्थित है।

सम्यग्मिथ्यात्व- दही गुड़वत् सम्यक्त्व व मिथ्यात्व रूप मिश्र परिणाम रूप अवस्था।

सयोगकेवली- योग सहित केवली।

सयोगी-जिन - जो तीनों योगों से युक्त केवली हैं उन्हें सयोगी-जिन कहते हैं।

सर्वज्ञ - सब कुछ जानने वाले भगवान सर्वज्ञ कहलाते हैं।

साकार- उजागर या साक्षात्।

सात्विक - दाल, रोटी, चावल, फल, साक, सब्जी आदि को सात्विक भोजन कहते हैं।

साध्य - साधने (प्राप्त करने) योग्य लक्ष्य।

साधु - 'आत्मानां साधतीति साधुः', जो आत्मा की साधना करते हैं वे साधु हैं।

साम्य - समान भाव या समता भाव।

सामायिक - निश्चित समय पूर्वक समता-भाव रखना सामयिक है और सामयिक का भाव सामायिक है। (अथवा विधिवत् त्रिकाल सम्यक्ध्यान करना)।

सार्वमय - सर्वज्ञ।

सासादन- सम्यग्दर्शन से छूट करना मिथ्यात्व की ओर गमन।

सिद्ध - समस्त आठ कर्मों के बन्धन को जिन्होंने नष्ट कर दिया है ऐसे नित्य निरंजन परमात्मा ही सिद्ध कहलाते हैं।

सिद्धांचल - ग्वालियर के पर्वत पर जहाँ पर 23 फुट ऊँची नमिनाथ भगवान की प्रतिमा पद्मासन में विराजमान है, और भी कई मूर्तियाँ गुफाओं में स्थित हैं।

सद्गुण-गण - उत्तम गुणों का समूह।

सिद्धासन- बैठकर एक पैर दूसरे पैर पर रखकर रीढ़ सीधी कर बैठने रूप आसन।

सुख - अपार आनन्द।

सुबह, मध्य, शाम - प्रातःकाल, दोपहर और सायंकाल।

सुप्रतिष्ठित केवली - इन्होंने ग्वालियर गोपगिरि से आठों कर्मों का क्षय करके मुक्ति-पद को प्राप्त किया है।

सुसुम्णा-योग - सूर्य, चन्द्र दोनों स्वर युगपत् चलते समय ध्यानस्थ-अवस्था।

सुसौम्य - बहुत सुन्दर।

सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती - जिन्होंने द्वितीय शुक्ल-ध्यान के द्वारा चार घातिया कर्मों का क्षय करके केवलज्ञान प्राप्त कर लिया है ऐसे केवली भगवान जब आयु का अन्तर्मुहूर्त्त काल शेष रहता है तब सब प्रकार के वचनयोग, मनोयोग और बादर काययोग का निरोध करके सूक्ष्म-काययोग का आलम्बन लेकर जो ध्यान करते हैं वह सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती नामक तीसरा शुक्ल ध्यान है।

सोपान - सीढ़ी।

स्तवन- स्तुति।

स्थावर - एक इन्द्रिय जीवों को स्थावर कहते हैं। जैसे-पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति। इन जीवों के पास मात्र स्पर्शन इन्द्रिय होती है।

स्पर्शन - जो हमें छूकर ज्ञान कराती है उसे स्पर्शन इन्द्रिय कहते हैं।

स्वर पंच लघु - अ, इ, उ, ऋ, लृ, ये पाँच लघु स्वर हैं।

स्वस्थ-ध्यान - अरोग्य मय निश्चल शुभ ध्यान।

स्वाधीन - अपने अधीन ।

षड्द्रव्य- जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

हरि - जिन्होंने कर्मों को हरा दिया है वे हरि कहलाते हैं।

हितोपदेशी - हित अर्थात् सुख या कल्याण के मार्ग का उपदेश देने वाले।

हिंसानंद - हिंसा में आनन्द मानना।

हेतु - कारण या साधन।

LIKE
SUBSCRIBE!

ध्यान पर सम्यक् ध्यान शतक के प्रवचन सुनने के लिए

youtube:- aarjav vani

सम्यक् ध्यान शतक पुस्तक डाउनलोड करें...

वेबसाइट- www.aarjavvani.com

अन्य स्तुति, स्तोत्र (अर्थ सहित),कक्षाएं,
अहिंसा-शिक्षा आदि पर अनेक प्रवचन भी अपलोड हैं।

णमोकार मंत्र जाप,सुप्रभात स्तोत्र, महावीराष्टक, गोम्मटेश स्तुति,दर्शन पाठ,मंगलाष्टक, अष्टाष्टक स्तोत्र,देव-स्तुति, का अर्थ सहित वाचन

●● कक्षायें ●●

इष्टोपदेश
द्रव्यसंग्रह
तत्त्वार्थसूत्र
समाधितंत्र
स्वयंभू स्तोत्र
तीर्थोदय काव्य
भावना द्वात्रिंशतिका
रत्नकरंडक श्रावकाचार
प्रश्नोत्तर रत्नमालिका

●● प्रवचन ●●

शिक्षा,संस्कृति
अहिंसा,लक्ष्य
ध्यान,सल्लेखना
सम्यकदर्शन,दश धर्म
जैन रामायण,अष्टकर्म
सोलहकारण भावना
अष्टान्हिका,षट आवश्यक
दान,पूजा, शील, उपवास

● गुरु रचित साहित्य ●

जिनवर स्तुति
तीर्थोदय काव्य
सम्यक् ध्यान शतक
धर्म भावना शतक
सदाचार सूक्ति काव्य
आध्यात्मिक कवितायें

आचार्य श्री के चातुर्मास स्थलों पर हुए सभी सांस्कृतिक कार्यक्रम,विद्वत संगोष्ठी भी चैनल में अपलोड हैं।

प्रतिदिन के लाइव प्रवचन सुनने हेतु aarjav vani चैनल को सब्सक्राइब करें।

प्रतिदिन के प्रवचन,गुरुभक्ति, एवं शंका समाधान का सीधा प्रसारण भी किया जाता है।

aarjav vani 9174843674,9425601161

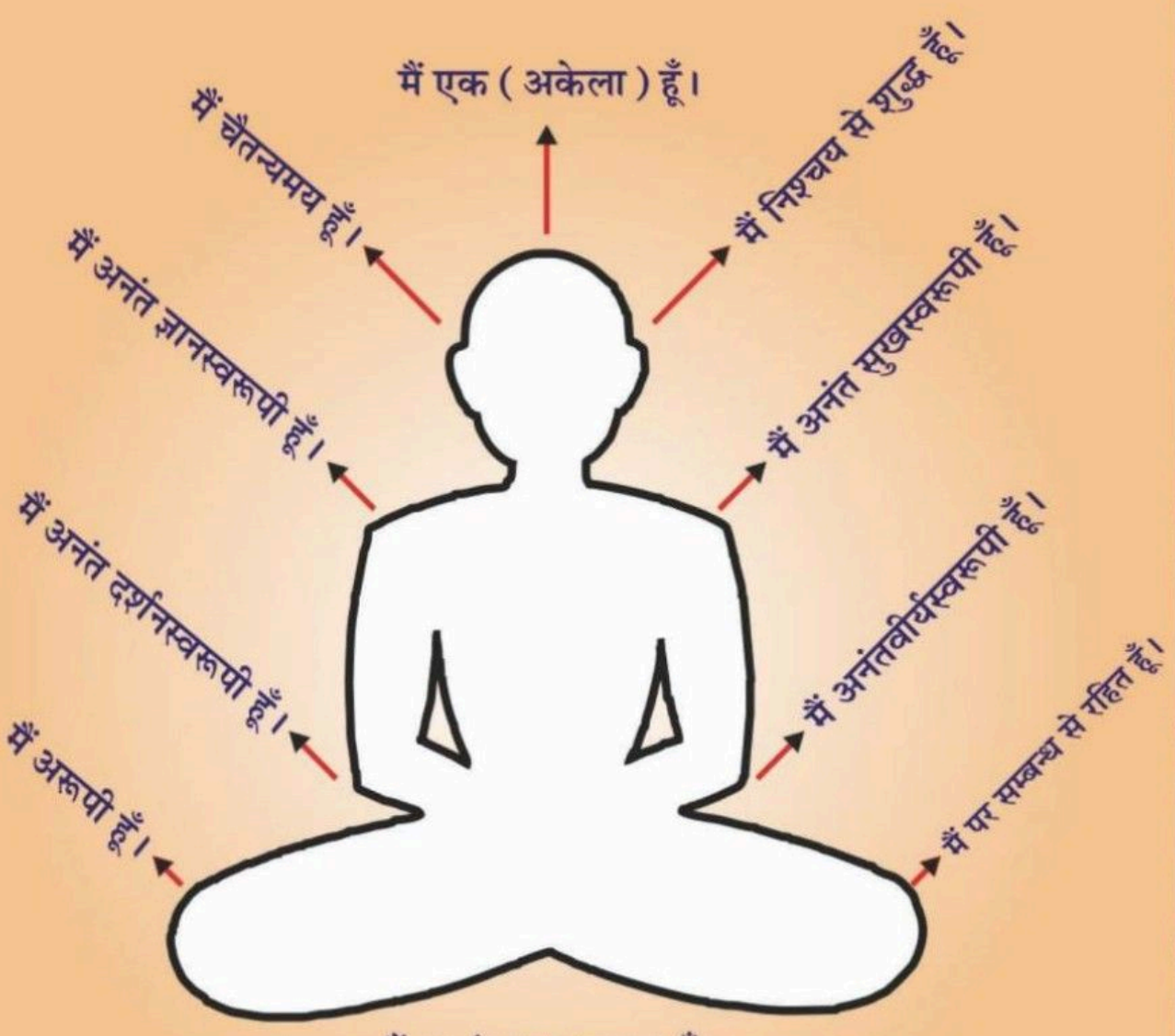
मैं एक (अकेला) हूँ।
मैं चैतन्यमय हूँ।
मैं निश्चय से शुद्ध हूँ।
मैं अनंत ज्ञानस्वरूपी हूँ।
मैं अनंत सुखस्वरूपी हूँ।
मैं अनंत दर्शनस्वरूपी हूँ।
मैं अनंतवीर्यस्वरूपी हूँ।
मैं अरूपी हूँ।
मैं पर सम्बन्ध से रहित हूँ।
मैं आनंद का भण्डार हूँ।

तत्त्वधारणा

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादाएँ

क्र.	पदार्थ	शीत ऋतु अगहन से फाल्गुन	ग्रीष्म ऋतु चैत्र से आषाढ़	वर्षा ऋतु श्रावण से कार्तिक
1.	शक्कर का बूरा	1 माह	15 दिन	7 दिन
2.	दूध (दूहने के पश्चात्) दूध (उबालने के पश्चात्)	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर
3.	दही (गर्म दूध का)	8 पहर	8 पहर	8 पहर
4.	छाछ (बिलोते समय गरम पानी डालें) छाछ (पीछे गरम पानी डालें तो)	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी
5.	आटा (सर्व प्रकार)	7 दिन	5 दिन	3 दिन
6.	मसाले पिसे हुए	7 दिन	5 दिन	3 दिन
7.	नमक पिसा हुआ नमक मसाला मिला दें तो	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे
8.	खिचड़ी,रायता, कढ़ी, तरकारी, रोटी	2 पहर	2 पहर	2 पहर
9.	पूरी, हलवा, बड़ा आदि	4 पहर	4 पहर	4 पहर
10.	मौन वाले पकवान	8 पहर	8 पहर	8 पहर
11.	बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
12.	मीठे पदार्थ मिला दही	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी
13.	गुड़ मिला दही, छाछ और द्विदल	सर्वथा अभक्ष्य		
14.	घी, तेल एवं गुड़	जब तक स्वाद न बिगड़े		

एक घड़ी-24 मिनट की और 1 पहर-3 घंटे का होता है

साभार - आहार विधि